

ए. वेंकटसुब्बैया नायडू

बनाम

एस. चेल्लप्पन और अन्य

सितंबर 19, 2000

[के.टी. थॉमस और आर.पी. सेठी, न्यायमूर्तिगण]

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 :

आदेश 39, नियम 1, 2 और 3-विचारण न्यायालय द्वारा कारण दर्ज किए बिना और आवेदक को नियम 3 के परंतुक में निर्धारित कर्तव्यों का पालन करने की आवश्यकता के बिना अंतरिम एक पक्षीय निषेधाज्ञा आदेश प्रदान करना-इसका परिणाम-अभिनिर्धारित, निषेधाज्ञा आदेश में निहित रूप से ऐसी आवश्यकताएं शामिल मानी जाएंगी और अपीलकर्ता को कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।

आदेश 39, नियम 3 ए-धारा 104, आदेश 43, नियम 1-विचारण न्यायालय 30 दिनों के भीतर अंतिम आदेश पारित करने में विफल-अभिनिर्धारित, निषेधाज्ञा आदेश 30 दिनों की समाप्ति की तिथि को अंतिम आदेश माना जाएगा और व्यथित पक्षकार अपील के अधिकार का हकदार है।

धारा 104, आदेश 43, नियम 1-वैकल्पिक उपचार उपलब्ध होने पर उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण याचिका पर विचार करना-क्या सही है-अभिनिर्धारित, उच्च न्यायालय को पक्षकारों को वैकल्पिक उपचारों का लाभ उठाने का निर्देश देना चाहिए था और पुनरीक्षण याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए था-भारत का संविधान-अनुच्छेद 227।

अपीलकर्ता-वादी ने विचारण न्यायालय के समक्ष उत्तरदाताओं को वाद संपत्ति से बेदखल करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के लिए एक वाद दायर किया। अपीलकर्ता ने

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 39 नियम 1 और 2 के तहत अस्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने के लिए एक आवेदन भी प्रस्तुत किया, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया था। उत्तरदाताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत एक पुनरीक्षण याचिका दायर कर आरोप लगाया कि उत्तरदाता संपत्ति के कब्जे और उपभोग में थे।

उच्च न्यायालय ने यह देखते हुए निषेधाज्ञा आदेश को अपास्त कर दिया कि यह आदेश संहिता के आदेश 39 नियम 3ए के तहत तीस दिनों के बाद प्रभाव में आ सकता है। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय को निषेधाज्ञा के लिए अंतवर्ती आवेदन पर विचार करने और गुण-दोष के आधार पर आदेश पारित करने का निर्देश दिया।

इस न्यायालय के समक्ष अपील में, वादी ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि प्रतिवादियों के पास वैकल्पिक उपचार उपलब्ध थे, अर्थात् वे या तो निषेधाज्ञा आदेश को निरस्त कराने के लिए विचारण न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकते थे अथवा उक्त आदेश के विरुद्ध अपील दायर कर सकते थे। प्रतिवादियों का तर्क था कि आदेश 39 के नियम 3 के परंतुक में विनिर्दिष्ट आवश्यकताओं का अनुपालन किए बिना पारित की गई निषेधाज्ञा शून्य है।

अपील का निष्पादन करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1. दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 39 के नियम 3 के तहत पारित एक आदेश में निहित रूप से नियम के परंतुक (ए) और (बी) में निर्धारित आवश्यकताएं शामिल मानी जाती हैं, भले ही वे स्पष्ट रूप से न कही गई हों। लेकिन यदि कोई पक्षकार, जिसके पक्ष में एक पक्षीय आदेश पारित किया गया था, उन कर्तव्यों का पालन करने में विफल रहता है जो परंतुक की आवश्यकता के अनुसार किए जाने चाहिए, तो पक्षकार को जोखिम उठाना चाहिए। उसकी ओर से ऐसी आवश्यकताओं का पालन न करने को बिना किसी परिणाम के जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और उसे केवल इसका लाभ उठाने में सक्षम

नहीं बनाया जा सकता है। आदेश प्राप्त करने वाले पक्षकार के लिए उन कर्तव्यों का पालन न करने का परिणाम जो उसे करने के लिए आवश्यक है, यह है कि यदि दूसरे पक्षकार द्वारा आदेश का पालन नहीं किया जाता है तो उसे ऐसे आदेश का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। [310-सी-डी]

2.1. आदेश 39 के तहत नियम 3ए उस पक्षकार को सुरक्षा प्रदान करता है जिसके खिलाफ *एक पक्षीय* निषेधाज्ञा आदेश पारित किया गया था। पहला कानूनी दायित्व यह है कि न्यायालय तीस दिनों की अवधि के भीतर निषेधाज्ञा के आवेदन को अंतिम रूप से निष्पादित करने का प्रयास करेगा। दूसरा कानूनी दायित्व यह है कि यदि किन्हीं वैध कारणों से न्यायालय पूर्वोक्त समय के भीतर आवेदन को अंतिम रूप से निष्पादित नहीं कर सका तो न्यायालय को इसके कारणों को लिखित रूप में दर्ज करना होगा। [311-बी]

2.2. न्यायालय ने उन तीन सुरक्षात्मक बाधाओं को दरकिनार कर दिया होगा जो विधायिका ने उस व्यक्ति की सुरक्षा के लिए प्रदान किए हैं जिसके खिलाफ मामले में अपनी बात कहने का अवसर प्रदान किए बिना आदेश पारित किया गया था। पहला यह है कि आदेश पारित करने से पहले न्यायालय उसे सूचना देने के लिए बाध्य है। यह केवल एक बहुत ही असाधारण आकस्मिकता के माध्यम से है कि न्यायालय को उक्त सुरक्षात्मक उपाय को दरकिनार करने का अधिकार है। दूसरा, आवेदन पर अंतिम आदेश पारित करने के लिए न्यायालय पर वैधानिक दायित्व है जो तीस दिनों की अवधि के भीतर हो। केवल बहुत ही असाधारण मामलों में ही न्यायालय ऐसे नियम को दरकिनार कर सकता है, जिन मामलों में विधायिका न्यायालय को इस तरह दरकिनार करने के पर्याप्त कारण रखने और उन कारणों को लिखित रूप में दर्ज करने का आदेश देती है। यदि उस बाधा को भी न्यायालय द्वारा दरकिनार कर दिया जाता है, तो यह

अभिनिर्धारित करना मुश्किल है कि आदेश से प्रभावित पक्षकार को अनिवार्य रूप से एकमात्र पीड़ित होना चाहिए। [311-डी-ई]

2.3. कानून की यह स्वीकृत स्थिति है कि किसी भी पक्षकार को न्यायालय की निष्क्रियता या कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार कार्य करने में उसकी चूक के लिए भुगतने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। सामान्य परिस्थितियों में व्यथित पक्षकार संहिता के आदेश 43 नियम 1 के संदर्भ में संहिता के आदेश 39 के नियम 1, 2, 2 ए, 4 या 10 के तहत पारित आदेश के खिलाफ ही अपील दायर कर सकता है। वह अस्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने या रद्द करने के आवेदन के लंबित रहने के दौरान अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय से संपर्क नहीं कर सकता है। ऐसी परिस्थितियों में जिस पक्षकार को कानून के आदेश का पालन करने में न्यायालय की निष्क्रियता के कारण न्याय नहीं मिलता है, उसके पास एक उपचार होना चाहिए। इसलिए ऐसे मामले में जहां संहिता के आदेश 39 नियम 3 ए के आदेश का उल्लंघन किया जाता है, व्यथित पक्षकार, अस्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने या रद्द करने के लिए आवेदन के लंबित होने के बावजूद, आदेश के लागू रहने के खिलाफ अपील के अधिकार का हकदार होगा। ऐसी अपील में, यदि दायर की जाती है, तो अपीलीय न्यायालय अपील पर विचार करने और नियम 3 ए के प्रावधानों का पालन करने में अधीनस्थ न्यायालय की चूक का संज्ञान लेने के लिए बाध्य होगा। उपयुक्त मामलों में अपीलीय न्यायालय, निषेधाज्ञा के आदेश को प्रदान करने या रद्द करने या संशोधित करने के अलावा, गलती करने वाले न्यायिक अधिकारी के खिलाफ उपयुक्त कार्रवाई का सुझाव दे सकता है, जिसमें उसकी एसीआर में प्रतिकूल प्रविष्टि करने के लिए कदम उठाने की सिफारिश शामिल है। आवेदन का निर्णय करने या एक पक्षीय अस्थायी निषेधाज्ञा को रद्द करने में विफलता को, अपील के प्रयोजनों के लिए, नियम में उल्लिखित तीस

दिनों की समाप्ति की तिथि पर, अस्थायी निषेधाज्ञा के आवेदन पर पारित अंतिम आदेश माना जाएगा। [311-एफ-एच; 312-ए-सी]

3. इस प्रश्न के संबंध में कि क्या उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत याचिका पर विचार करना चाहिए था जब पक्षकार के पास दो अन्य वैकल्पिक उपचार थे, हालांकि उच्च न्यायालय की संवैधानिक शक्तियों के प्रयोग के खिलाफ कोई बाधा नहीं डाली जा सकती है, यह एक अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सिद्धांत है जिसने न्यायिक मान्यता प्राप्त की है कि उच्च न्यायालय को पक्षकार को संवैधानिक उपचार का सहारा लेने से पहले एक या दूसरे ऐसे उपचारों का लाभ उठाने का निर्देश देना चाहिए। [312-डी]

4. जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा निर्देशित किया गया है, विचारण न्यायालय को वादी द्वारा दायर अंतवर्ती आवेदन पर गुण-दोष के आधार पर और कानून के अनुसार अंतिम आदेश पारित करना चाहिए। विचारण न्यायालय के आदेशों तक, वाद दायर करने से ठीक पहले की यथास्थिति पक्षकारों द्वारा बनाए रखी जाएगी। [312-एफ]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2000 की दीवानी अपील संख्या 5102।

मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा 1999 की दीवानी पुनरीक्षण याचिका संख्या 2251 में दिनांक 30.09.1999 को पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध।

अपीलकर्ता की ओर से एस. शिवसुब्रमण्यम, एम. मोहन और आर. नेदुमारन।

उत्तरदाता संख्या 1 से 5 की ओर से श्री वी. सेल्वराज, मेसर्स अर्पुथम, अरुणा एवं कंपनी के लिए।

उत्तरदाता संख्या 7-9 की ओर से एम.ए. चिन्नास्वामी।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा सुनाया गया

थॉमस, न्यायमूर्ति। अनुमति प्रदान की गई।

जब एक वादी कुछ प्रतिवादियों के खिलाफ एक पक्षीय अंतरिम निषेधाज्ञा आदेश के लिए दीवानी न्यायालय गया और उसे प्राप्त किया, तो वे प्रतिवादी उस आदेश को अभिखंडित कराने के लिए उच्च न्यायालय गए। दोनों पक्षकार अपने-अपने प्रयास में सफल रहे और अब वे दोनों एक-दूसरे द्वारा अपनाए गए तरीके के लिए एक-दूसरे पर आरोप लगाते हैं। यह अपील वादी के कहने पर विशेष अनुमति द्वारा है।

मुकदमेबाजी का विषय मद्रास (अब चेन्नई) में ट्रिप्लिकेन में बिग स्ट्रीट पर द्वार संख्या 177 से 182 वाली संपत्ति है। इस स्तर पर और इस अपील में न तो वादी द्वारा वादपत्र में दी गई दलीलों को और न ही वाद संपत्ति के अधिकार के संबंध में इसके जवाब में विरोध करने वाले पहले प्रतिवादी द्वारा बताए गए तथ्यों को बयान करना आवश्यक है। यह कहना पर्याप्त है कि वादी संपत्ति के संबंध में एक एस. अलगू (जिन्हें वाद में छठे प्रतिवादी के रूप में रखा गया है) के अधीन एक पट्टेदार होने का दावा करता है और उस आधार पर उसने संपत्ति के कब्जे में होने का दावा किया। उसने आरोप लगाया कि प्रतिवादी 1 से 5 उसे बेदखल करने की धमकी दे रहे हैं।

अपीलकर्ता-वादी ने 25.6.1999 को प्रतिवादी संख्या 1 से 5 को उसे बेदखल करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री के लिए वाद दायर किया। वाद दायर करने के साथ-साथ उसने दीवानी प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') के आदेश 39 नियम 1 और 2 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया "उत्तरदाता 1 से 5 या उनके लोगों या दलालों, या उनके प्रतिनिधियों या उनके माध्यम से या उनके अधीन दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति को याचिकाकर्ता को वाद संपत्ति से बेदखल करने से रोकने के लिए, सिवाय कानून की उचित प्रक्रिया के, एक तदर्थ अंतरिम निषेधाज्ञा पारित करने के लिए और ऐसे आगे या अन्य आदेश पारित करने के लिए।"

29.6.1999 को सिटी व्यवहार न्यायालय, चेन्नई के सहायक न्यायाधीश ने उक्त आवेदन पर निम्नलिखित एक पक्षीय आदेश पारित किया:

"सुना गया। दस्तावेजों का अवलोकन किया गया। किराए की रसीद दस्तावेज 11 से दस्तावेज 47 साबित करते हैं कि याचिकाकर्ता वैधानिक किरायेदार है और प्रथम दृष्टया वाद संपत्ति के कब्जे में है। हालांकि संपत्ति आर.6 द्वारा बंधक दस्तावेज 3 के आधार पर पट्टे पर दी गई थी, याचिकाकर्ता अब किरायेदार के रूप में संपत्ति के निरंतर कब्जे में है। इसलिए सुविधा का संतुलन याचिकाकर्ता के पक्ष में है। न्याय के हित में, ऐसा प्रतीत होता है कि आर.1 से आर.5 को याचिकाकर्ता को वाद संपत्ति से बेदखल करने से रोका जाता है, सिवाय कानून की उचित प्रक्रिया के। 25.8.99 तक सूचना जारी करें। तब तक तदर्थ अंतरिम निषेधाज्ञा। आदेश 39 नियम 3 का पालन किया जाना चाहिए।"

पहले उत्तरदाता ने, अपनी और उत्तरदाता संख्या 2 से 5 की ओर से, मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 227 का आह्वान करते हुए एक पुनरीक्षण याचिका दायर की, जिसमें आरोप लगाया गया कि उन्होंने 15.3.1996 को निष्पादित विभिन्न बिक्री दस्तावेजों के अनुसार इसके मालिकों से संपत्ति खरीदी, और वे संपत्ति के कब्जे और उपभोग में थे। उन्होंने आगे आरोप लगाया कि एक रंगनाथन, एम.एल.ए. और एक हिदायतुल्ला ने मिलकर उत्तरदाताओं से संपत्ति खरीदने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन इस पर सहमति नहीं हुई और तब उन दोनों व्यक्तियों ने अपनी मांग के सामने झुकने के लिए उन पर धमकी और दबाव डाला। चूंकि उन्होंने ऐसी धमकियों के आगे घुटने नहीं टेके, इसलिए 1998 में कुछ पक्षकारों द्वारा एक वाद दायर किया गया था जो अब वर्तमान वादी का समर्थन कर रहे हैं। उत्तरदाताओं ने आगे आरोप लगाया कि उक्त वाद उन दो नामित व्यक्तियों के कहने और उकसाने पर दायर किया गया था। जब वे वहां से कोई राहत पाने में विफल रहे तो कुछ मनगढ़ंत दस्तावेजों के आधार पर

एक एम. देवसिंघमणी के माध्यम से एक और वाद दायर किया गया। चूंकि उस वाद में भी कोई राहत नहीं मिली थी, इसलिए उत्तरदाताओं के अनुसार वर्तमान वाद, जो श्रृंखला में तीसरा है, उपरोक्त नामित व्यक्तियों के इशारे पर दायर किया गया है।

मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश जिन्होंने पुनरीक्षण का निष्पादन किया, ने यह टिप्पणी की कि विचारण न्यायालय को पहले ही चरण में निषेधाज्ञा का आदेश नहीं देना चाहिए था जो तीस दिनों से अधिक समय तक काम कर सके क्योंकि न्यायालय को तब यह जानने का कोई अवसर नहीं था कि प्रभावित पक्षकार को इसके बारे में क्या कहना है। विद्वान एकल न्यायाधीश के अनुसार, संहिता के आदेश 39 नियम 3ए के तहत ऐसा तरीका अस्वीकार्य है। इसलिए, उन्होंने "कानून के प्रावधानों के स्पष्ट उल्लंघन के लिए" निषेधाज्ञा आदेश को अपास्त कर दिया और ध्यान दिया कि यह वाद संपत्ति के संदर्भ में दायर किया गया तीसरा वाद है और इसलिए बिना सूचना के एक पक्षीय निषेधाज्ञा देने की निंदा की। हालांकि विद्वान एकल न्यायाधीश ने आगे अन्य आरोपों में जाने से इंकार कर दिया, लेकिन उन्होंने निम्नलिखित टिप्पणियां करना भी चुना है:

"हालाँकि, *प्रथम दृष्टया*, मैं इस बात से संतुष्ट हूँ कि अंतरिम निषेधाज्ञा प्रदान करने से पूर्व इन सामग्रियों पर विचार किया जाना प्रासंगिक है। वादपत्र और शपथ-पत्र के कथनों के अनुसार यह स्वीकार करते हैं कि पहला उत्तरदाता 1670 वर्ग फुट के खाली हिस्से पर कब्जा कर रहा है और कागज और चारकोल का व्यवसाय चला रहा है। लेकिन पट्टा विलेख के अलावा यह दिखाने के लिए कोई दस्तावेज़ नहीं है कि पहला उत्तरदाता वास्तव में कब्जे में है और ऐसा व्यवसाय चला रहा है। इसलिए एक पक्षीय आदेश अस्थिर है। इन सभी कारणों से, मेरा विचार है कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है और इसे तदनुसार अपास्त किया जाता है।"

ऐसा अभिनिर्धारित करने के बाद विद्वान एकल न्यायाधीश ने विचारण न्यायालय को निषेधाज्ञा के लिए अंतवर्ती आवेदन पर विचार करने और गुण-दोष के आधार पर और कानून के अनुसार शीघ्र आदेश पारित करने का निर्देश दिया।

विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री शिवसुब्रमण्यम ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत एक याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए था जब उत्तरदाता के पास वैधानिक रूप से दो उपचार उपलब्ध थे। पहला यह है कि उत्तरदाता पारित अंतरिम एक पक्षीय आदेश के किसी भी संशोधन के लिए नहीं, तो रद्द करने के लिए विचारण न्यायालय से संपर्क कर सकता था। दूसरा यह है कि उसके द्वारा उक्त आदेश के खिलाफ अपील दायर की जा सकती थी। वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि उत्तरदाता के लिए दोनों में से किसी भी उपचार को चुनने का विकल्प खुला है।

संहिता की धारा 104 कहती है कि

"निम्नलिखित आदेशों से अपील की जाएगी, और इस संहिता के मुख्य भाग में या उस समय लागू किसी कानून द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए को छोड़कर, किसी अन्य आदेश से नहीं:

(i) नियमों के तहत दिया गया कोई भी आदेश जिससे नियमों द्वारा स्पष्ट रूप से अपील की अनुमति दी गई हो।"

आदेश 43 नियम 1 कहता है कि:

"निम्नलिखित आदेशों से धारा 104 के प्रावधानों के तहत अपील की जाएगी अर्थात्;

(आर) आदेश 39 के नियम 1, नियम 2, नियम 2 ए, नियम 4 या नियम 10 के तहत एक आदेश।"

आदेश 39 नियम 1 इस प्रकार कहता है:

1. "जहां किसी वाद में यह शपथपत्र या अन्यथा से साबित हो जाता है

(ए) कि वाद में विवादित कोई भी संपत्ति बर्बाद होने के खतरे में है, क्षतिग्रस्त या वाद के किसी भी पक्षकार द्वारा हस्तांतरित, या डिक्री के निष्पादन में गलत तरीके से बेची गई, या

(बी) कि प्रतिवादी अपने लेनदारों को धोखा देने के उद्देश्य से अपनी संपत्ति को हटाने या निपटाने की धमकी देता है, या इरादा रखता है,

(सी) कि प्रतिवादी वादी को बेदखल करने की धमकी देता है या वाद में विवादित किसी भी संपत्ति के संबंध में वादी को चोट पहुंचाता है, न्यायालय आदेश द्वारा ऐसे कार्य को रोकने के लिए एक अस्थायी निषेधाज्ञा प्रदान कर सकता है, या संपत्ति की बर्बादी, क्षति, हस्तांतरण, बिक्री, हटाने या निपटान या वादी के निपटान को रोकने और रोकने के उद्देश्य से ऐसा अन्य आदेश दे सकता है, या अन्यथा वाद में विवादित किसी भी संपत्ति के संबंध में वादी को चोट पहुंचा सकता है, जैसा कि न्यायालय उचित समझे, वाद के निपटारे तक या अगले आदेश तक।"

यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि निषेधाज्ञा के अंतरिम एक पक्षीय आदेश पारित करने की शक्ति उक्त नियम से नहीं निकलती है। वास्तव में, उक्त नियम सूचना के साथ या उसके बिना, अंतरिम या अस्थायी, या आगे के आदेशों तक या वाद के निपटारे तक अस्थायी निषेधाज्ञा के आदेश देने की शक्ति का भंडार है। इसलिए, नियम 1 में पूर्वोक्त शक्तियों के प्रयोग में पारित कोई भी आदेश संहिता के आदेश 43 नियम 1 में दर्शाए गए अनुसार लागू होगा। आदेश से प्रभावित पक्षकार के लिए विकल्प यह है कि वह या तो अपीलीय न्यायालय जाए या किसी भी राहत के लिए उसी न्यायालय से संपर्क करे जिसने एक पक्षीय आदेश पारित किया था।

उत्तरदाताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तब तर्क दिया कि आदेश 39 के नियम 3 में परिकल्पित आवश्यकताओं का पालन किए बिना निषेधाज्ञा प्रदान करने वाला आदेश शून्य होगा। नियम 3 इस प्रकार पढ़ा जाता है:

"न्यायालय ऐसे मामलों में, जहां ऐसा प्रतीत होता है कि निषेधाज्ञा प्रदान करने का उद्देश्य देरी से विफल हो जाएगा, को छोड़कर, निषेधाज्ञा प्रदान करने से पहले विपक्षी को इसके लिए आवेदन का सीधा सूचना दिया जाएगा:

[बशर्ते कि, जहां विपक्षी को आवेदन का सूचना दिए बिना निषेधाज्ञा प्रदान करने का प्रस्ताव है, न्यायालय अपनी राय के कारणों को दर्ज करेगा कि निषेधाज्ञा प्रदान करने का उद्देश्य देरी से विफल हो जाएगा, और आवेदक को आवश्यकता होगी -

(ए) विपक्षी को वितरित करने के लिए, या पंजीकृत डाक द्वारा उसे भेजने के लिए, निषेधाज्ञा प्रदान करने का आदेश दिए जाने के तुरंत बाद, निषेधाज्ञा के लिए आवेदन की एक प्रति इसके साथ-

(i) आवेदन के समर्थन में दायर शपथपत्र की एक प्रति;

(ii) वादपत्र की एक प्रति; और

(iii) उन दस्तावेजों की प्रतियां जिन पर आवेदक निर्भर करता है, और

(बी) उस दिन जिस दिन ऐसा निषेधाज्ञा प्रदान किया जाता है या उस दिन के ठीक बाद वाले दिन, एक शपथपत्र दाखिल करने के लिए जिसमें कहा गया हो कि पूर्वोक्त प्रतियां इस प्रकार वितरित या भेजी गई हैं।"

यदि अंतरिम एक पक्षीय निषेधाज्ञा प्रदान करने का आदेश पारित करने वाले न्यायालय ने इसके कारणों को दर्ज नहीं किया या आवेदक से आदेश 39 के नियम 3 के खंड (ए) और (बी) में गणना किए गए कर्तव्यों का पालन करने की आवश्यकता नहीं की तो स्थिति क्या

होगी। हमारे विचार में ऐसे आदेश को निहित रूप से ऐसी आवश्यकताओं को शामिल करने के रूप में माना जा सकता है, भले ही वे इतने शब्दों में न कहे गए हों। लेकिन यदि कोई पक्षकार, जिसके पक्ष में एक पक्षीय आदेश पारित किया गया था, उन कर्तव्यों का पालन करने में विफल रहता है जो उसे ऊपर दिए गए परंतुक के अनुसार करने हैं, तो उसे जोखिम उठाना होगा। उसकी ओर से ऐसी आवश्यकताओं का पालन न करने को बिना किसी परिणाम के जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और उसे केवल इसका लाभ उठाने में सक्षम नहीं बनाया जा सकता है। उन कर्तव्यों का पालन न करने के लिए (जिसने आदेश प्राप्त किया) पक्षकार का परिणाम जो उसे करने के लिए आवश्यक है, यह है कि यदि दूसरे पक्षकार द्वारा आदेश का पालन नहीं किया जाता है तो उसे ऐसे आदेश का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। आदेश के एक अवज्ञाकारी लाभार्थी को दूसरे पक्षकार के खिलाफ कथित किसी भी अवज्ञा के खिलाफ शिकायत करने के लिए नहीं सुना जा सकता है।

विद्वान एकल न्यायाधीश ने कहा कि विचारण न्यायालय को तीस दिनों से अधिक समय तक लागू रहने के लिए एक पक्षीय निषेधाज्ञा नहीं देना चाहिए था। उक्त टिप्पणी संहिता के आदेश 39 नियम 3-ए में निहित भाषा पर आधारित है जो इस प्रकार पढ़ी जाती है:

"जहां विपक्षी को सूचना दिए बिना निषेधाज्ञा प्रदान किया गया है, न्यायालय निषेधाज्ञा प्रदान किए जाने की दिनांक से तीस दिनों के भीतर आवेदन को अंतिम रूप से निपटाने का प्रयास करेगा; और जहां वह ऐसा करने में असमर्थ है, वह ऐसी अक्षमता के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा।"

नियम यह नहीं कहता है कि निषेधाज्ञा आदेश की अवधि न्यायालय द्वारा पहली बार में तीस दिनों तक सीमित होनी चाहिए, लेकिन न्यायालय को निषेधाज्ञा प्रदान किए जाने के दिन से तीस दिनों के भीतर इस पर अंतिम आदेश पारित करना चाहिए। इसलिए, आदेश स्वतः ही

अवैध नहीं हो जाता है केवल इसलिए कि यह तीस दिनों या उससे कम अवधि तक सीमित नहीं था।

बहरहाल, हमें न्यायालय द्वारा नियम 3-ए द्वारा निर्देशित तीस दिनों के भीतर अंतिम आदेश पारित करने में विफल रहने के कारण किसी भी परिणाम पर विचार करना होगा।

पूर्वोक्त नियम उस पक्षकार को तीन-आयामी सुरक्षा प्रदान करता है जिसके खिलाफ एक पक्षीय निषेधाज्ञा आदेश पारित किया गया था। पहला कानूनी दायित्व यह है कि न्यायालय तीस दिनों की अवधि के भीतर निषेधाज्ञा के आवेदन को अंतिम रूप से निपटाने का प्रयास करेगा। दूसरा कानूनी दायित्व यह है कि यदि किन्हीं वैध कारणों से न्यायालय पूर्वोक्त समय के भीतर आवेदन को अंतिम रूप से नहीं निपटा सका तो न्यायालय को इसके कारणों को लिखित रूप में दर्ज करना होगा।

यदि कोई न्यायालय इनमें से कोई भी काम नहीं करता है तो क्या होगा? हमें यह ध्यान में रखना होगा कि ऐसे मामले में न्यायालय ने उन तीन सुरक्षात्मक बाधाओं को दरकिनार कर दिया होगा जो विधायिका ने उस व्यक्ति की सुरक्षा के लिए प्रदान किए हैं जिसके खिलाफ मामले में अपनी बात कहने का अवसर प्रदान किए बिना आदेश पारित किया गया था। पहला यह है कि आदेश पारित करने से पहले न्यायालय उसे नोटिस देने के लिए बाध्य है। यह केवल एक बहुत ही असाधारण आकस्मिकता के माध्यम से है कि न्यायालय को उक्त सुरक्षात्मक उपाय को दरकिनार करने का अधिकार है। दूसरा आवेदन पर तीस दिनों की अवधि के भीतर अंतिम आदेश पारित करने के लिए न्यायालय पर वैधानिक दायित्व है। यहां भी केवल बहुत ही असाधारण मामलों में ही न्यायालय ऐसे नियम को दरकिनार कर सकता है, जिन मामलों में विधायिका न्यायालय को इस तरह दरकिनार करने के पर्याप्त कारण रखने और उन कारणों को लिखित रूप में दर्ज करने का आदेश देती है। यदि उस बाधा को भी न्यायालय द्वारा दरकिनार कर दिया

जाता है तो यह अभिनिर्धारित करना मुश्किल है कि आदेश से प्रभावित पक्षकार अनिवार्य रूप से एकमात्र पीड़ित होना चाहिए।

कानून की यह स्वीकृत स्थिति है कि किसी भी पक्षकार को न्यायालय की निष्क्रियता या कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार कार्य करने में उसकी चूक के लिए भुगतने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। सामान्य परिस्थितियों में व्यथित पक्षकार संहिता के आदेश 43 नियम 1 के संदर्भ में संहिता के आदेश 39 के नियम 1, 2, 2ए, 4 या 10 के तहत पारित आदेश के खिलाफ ही अपील दायर कर सकता है। वह अस्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने या रद्द करने के आवेदन के लंबित रहने के दौरान अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय से संपर्क नहीं कर सकता है।

ऐसी परिस्थितियों में जिस पक्षकार को कानून के आदेश का पालन करने में न्यायालय की निष्क्रियता के कारण न्याय नहीं मिलता है, उसके पास एक उपचार होना चाहिए। इसलिए हमारा विचार है कि ऐसे मामले में, जहाँ संहिता के आदेश 39 नियम 3ए के अनिवार्य उपबंध का उल्लंघन किया गया हो, वहाँ व्यथित पक्षकार को, अस्थायी निषेधाज्ञा के अनुदान अथवा उसके निरस्तीकरण से संबंधित आवेदन के लंबित रहने के बावजूद, प्रभावी बने हुए आदेश के विरुद्ध अपील करने का अधिकार प्राप्त होगा। ऐसी अपील में, यदि दायर की जाती है, तो अपीलीय न्यायालय अपील पर विचार करने और नियम 3ए के प्रावधानों का पालन करने में अधीनस्थ न्यायालय की चूक का संज्ञान लेने के लिए बाध्य होगा। उपयुक्त मामलों में अपीलीय न्यायालय, ऐसे निषेधाज्ञा के आदेश को प्रदान करने या रद्द करने या संशोधित करने के अलावा, गलती करने वाले न्यायिक अधिकारी के खिलाफ उपयुक्त कार्रवाई का सुझाव दे सकता है, जिसमें उसकी एसीआर में प्रतिकूल प्रविष्टि करने के लिए कदम उठाने की सिफारिश शामिल है। आवेदन का निर्णय करने या एक पक्षीय अस्थायी निषेधाज्ञा को रद्द करने में विफलता को, अपील के

प्रयोजनों के लिए, नियम में उल्लिखित तीस दिनों की समाप्ति की तिथि पर, अस्थायी निषेधाज्ञा के आवेदन पर पारित अंतिम आदेश माना जाएगा।

अब यह प्रश्न शेष है कि क्या उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत याचिका पर विचार करना चाहिए था जब पक्षकार के पास दो अन्य वैकल्पिक उपचार थे। हालांकि उच्च न्यायालय की संवैधानिक शक्तियों के प्रयोग के खिलाफ कोई बाधा नहीं डाली जा सकती है, यह एक अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सिद्धांत है जिसने न्यायिक मान्यता प्राप्त की है कि उच्च न्यायालय को पक्षकार को संवैधानिक उपचार का सहारा लेने से पहले एक या दूसरे ऐसे उपचारों का लाभ उठाने का निर्देश देना चाहिए। विद्वान एकल न्यायाधीश को पुनरीक्षण याचिका पर बिल्कुल भी विचार करने की आवश्यकता नहीं थी और अंतरिम एक पक्षीय आदेश से प्रभावित पक्षकार को अन्य उपचारों में से किसी एक का सहारा लेने का निर्देश दिया जाना चाहिए था। जो भी हो, अब इस पहलू पर विचार करना व्यर्थ है क्योंकि उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण याचिका पर विचार करना चुना था।

उच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देश के आलोक में कि विचारण न्यायालय को वादी द्वारा दायर अंतर्वर्ती आवेदन पर गुण-दोष के आधार पर और कानून के अनुसार अंतिम आदेश पारित करना चाहिए, हम आगे यह जोड़ सकते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा ऐसे आदेश पारित किए जाने तक, वाद दायर करने से ठीक पहले की यथास्थिति पक्षकारों द्वारा बनाए रखी जाएगी। इस अपील का निष्पादन उपरोक्त टिप्पणियों और निर्देशों के साथ किया जाता है।

बी.एस.

अपील का निष्पादन किया गया।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।